

नियत अभ्यास 3

बुधवार 4 सितंबर को कक्षा में जमा कीजिए।

1. नीचे निदा फ़ाज़ली और दुष्यंत कुमार की दो गज़लें दी गई हैं। (क) इनको ध्यान में रखते हुए गज़ल की विधा पर टिप्पणी कीजिए (गज़ल का प्रारूप, छंद के अलावा और विशेषताएँ, आदि)। (ख) इन गज़लों के विषय-वस्तु पर चर्चा करें।

निदा फ़ाज़ली -

अपना ग़म लेके कहीं और न जाया जाये
घर में बिखरी हुई चीज़ों को सजाया जाये

जिन चिरागों को हवाओं का कोई ख़ौफ़ नहीं
उन चिरागों को हवाओं से बचाया जाये

बाग में जाने के आदाब हुआ करते हैं
किसी तितली को न फूलों से उड़ाया जाये

खुदकुशी करने की हिम्मत नहीं होती सब में
और कुछ दिन यूँ ही औरों को सताया जाये

घर से मस्जिद है बहुत दूर चलो यूँ कर लें
किसी रोते हुए बच्चे को हँसाया जाये।

दुष्यंत कुमार-

हो गई है पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए

आज यह दीवार, परदों की तरह हिलने लगी
शर्त थी लेकिन कि ये बुनियाद हिलनी चाहिए

हर सड़क पर, हर गली में, हर नगर, हर गाँव में
हाथ लहराते हुए हर लाश चलनी चाहिए

सिर्फ हंगामा खड़ा करना मेरा मकसद नहीं
मेरी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए

मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही
हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए।

2. मोहन राकेश की कहानी 'मलबे का मालिक' पढ़ें और इस पर विस्तार से आलोचना - (विषय-वस्तु, शैली आदि) लिखें।

मलबे का मालिक

मोहन राकेश <https://www.femina.in/hindi/sahitya/kahani/story-malbe-ka-malik-by-mohan-rakesh-4824-2.html>

पूरे साढ़े सात साल के बाद लाहौर से अमृतसर आये थे। हाकी का मैच देखने का तो बहाना ही था, उन्हें ज्यादा चाव उन घरों और बाजारों को फिर से देखने का था, जो साढ़े सात साल पहले उनके लिए पराये हो गये थे। हर सड़क पर मुसलमानों की कोई न कोई टोली घूमती नजर आ जाती थी। उनकी आंखें इस आग्रह के साथ वहां की हर चीज को देख रही थीं, जैसे वह शहर साधारण शहर न होकर एक खास आकर्षण का केन्द्र हो।

तंग बाजारों में से गुजरते हुए वे एक-दूसरे को पुरानी चीज़ों की याद दिला रहे थे— देख, फतहदीना, मिसरी बाजार में अब मिसरी की दुकाने पहले से कितनी कम रही गयी हैं उस नुक्कड़ पर सुक़्खी भठियारन की भट्टी थी, जहां अब वह पान वाला बैठा है यह नमक मण्डी देख लो, खान साहब ! यहां की एक-एक ललाइन वह नमकीन होती है कि बस ।

बहुत दिनों के बाद बाजारों में तुरेदार पगड़िया और लाल तुर्की टोपियां दिखायी दे रही थीं। लाहौर से आये हुए मुसलमानों में काफी संख्या ऐसे लोगों की थी, जिन्हें विभाजन के समय मजबूर होकर अमृतसर छोड़कर जाना पड़ा था। साढ़े सात साल में आये अनिवार्य परिवर्तनों को देखकर कहीं उनकी आंखों में हैरानी भर जाती और कहीं अफसोस घिर आता— वल्लाह, कटड़ा जयमलसिंह इतना चौड़ा कैसे हो गया। क्या इस तरफ के सबके सब मकान जल गये? यहां हकीम आसिफ अली की दुकान थी न? अब यहां एक मोची ने कब्जा कर रखा है।

और कहीं-कहीं ऐसे भी वाक्य सुनायी दे जाते-- वली, यह मस्जिद ज्यों की त्यों खड़ी है? इन लोगों ने इसका गुरुद्वारा नहीं बना दिया?

जिस रास्ते से भी पाकिस्तानियों की टोली गुजरती, शहर के लोग उत्सुकतापूर्वक उसकी ओर देखते रहते। कुछ लोग अब भी मुसलमानों को आते देखकर शंकित-से रास्ते हट जाते थे, जबकि दूसरे आगे बढ़कर उनसे बगलगीर होने लगते थे। ज्यादातर वे आगंतुकों से ऐसे-ऐसे सवाल पूछते थे कि आजकल लाहौर का क्या हाल है? अनारकली में अब पहले जितनी रौनक होती है या नहीं? सुना है, शाहालमी गेट का बाजार पूरा नया बना है? कृष्ण नगर में तो कोई खास तब्दीली नहीं आयी? वहां का रिश्तपुरा क्या वाकई रिश्त के पैसे से बना है? कहते हैं पाकिस्तान में अब बुर्का बिल्कुल उड़ गया है, यह ठीक है? इन सवालों में इतनी आत्मीयता झलकती थी कि लगता था कि लाहौर एक शहर नहीं, हजारों लोगों का सगा-संबंधी है, जिसके हालात जानने के लिए वे उत्सुक हैं। लाहौर से आए हुए लोग उस दिन शहर-भर के मेहमान थे, जिनसे मिलकर और बातें करके लोगों को खामखह खुशी का अनुभव होता था।

बाजार बांसा अमृतसर का एक उपेक्षित-सा बाजार है, जो विभाजन से पहले गरीब मुसलमानों की बस्ती थी। वहां ज्यादातर बांस और शहतीरों की ही दुकानें थीं, जो सबकी सब एक ही आग में जल गयी थीं। बाजार बांसा की आग अमृतसर की सबसे भयानक आग थी, जिससे कुछ देर के लिए तो सारे शहर के जल जाने का अन्देशा पैदा हो गया था। बाजार बांसा के आसपास के कई मुहल्लों को तो उस आग ने अपनी लपेट में ले ही लिया था। खैर, किसी तरह वह आग काबू में आ तो गयी, पर उसमें मुसलमानों के एक एक घर के साथ हिन्दुओं के भी चार-चार, छह-छह घर जलकर राख हो गये। अब साढ़े सात साल में उनमें से कई इमारतें तो फिर से खड़ी हो गयी थीं, मगर जगह-जगह मलबे के ढेर अब भी मौजूद थे। नयी इमारतों के बीच-बीच में मलबे के ढेर अजीब ही वातावरण प्रस्तुत करते थे।

बाजार बांसा में उस दिन भी चहल-पहल नहीं थी, क्योंकि उस बाजार के ज्यादातर वाशिनदे तो अपने मकानों के साथ ही-शहीद हो गये थे और जो बचकर चले गये थे, उनमें शायद लौटकर आने की हिम्मत बाकी नहीं रही थी। सिर्फ एक दुबला-पतला बूढ़ा मुसलमान ही उस वीरान बाजार में आया और वहाँ की नई और जली हुई इमारतों को देखकर जैसे भूल-भुलैया में पड़ गया। बायें हाथ को जाने वाली गली के पास पहुँचकर उसके कदम अन्दर मुड़ने को हुए, मगर फिर वह हिचकिचाकर वहां बाहर ही खड़ा रह गया, जैसे उसे निश्चय नहीं हुआ कि वह वही गली है या नहीं, जिसमें वह जाना चाहता है। गली में एक तरफ कुछ बच्चे कीड़ी-काड़ा खेल रहे थे और कुछ अंतर पर दो स्त्रियां ऊंची आवाज़ में चीखती हुई एक-दूसरी को गालियां दे रही थीं।

-- सब कुछ बदल गया, मगर बोलियां नहीं बदलीं! --बुड़्ठे मुसलमान ने धीमे स्वर में अपने से कहा और छड़ी का सहारा लिये खड़ा रहा। उसके घुटने पाजामें से बाहर को निकल रहे थे और घुटनों के थोड़ा ऊपर ही उसकी शेरवानी में तीन-चार पैबंद लगे थे। गली में एक बच्चा रोता हुआ बाहर को आ रहा था। उसने उसे पुचकार कर पुकारा-- इधर आ, बेटे, आ इधर! देख तुझे चिज़ली देंगे, आ। --और वह अपनी जेब में हाथ डालकर उसे देने के लिए कोई चीज ढूँढ़ने लगा। बच्चा क्षणभर के लिए चुप कर गया, लेकिन फिर उसने होंठ बिसूर लिये और रोने लगा। एक सोलह-सत्रह बरस की लड़की गली के अंदर से दौड़ती हुई आयी और बच्चे की बांह पकड़कर उसे घसीटती हुई गली में ले चली। बच्चा रोने के साथ-साथ अपनी बांह छुड़ाने के लिए मचलने लगा। लड़की ने उसे बांहों में उठा कर अपने साथ चिपका लिया और उसका मुंह चूमती हुई बोली-- चुप कर, मेरा वीर! रोएगा तो तुझे वह मुसलमान पकड़ कर ले जाएगा, मैं वारी जाऊँ; चुप कर !

बुड़्ठे मुसलमान ने बच्चे को देने के लिए जो पैसा निकाला था, वह वापस जेब में रख लिया। सिर से टोपी उतारकर उसने वहां थोड़ा खुजलाया और टोपी बगल में दबा ली। उसका गला खुश्क हो रहा था और घुटने जरा-जरा कांप रहे थे। उसने गली के बाहर की बंद दुकान के तख्ते का सहारा ले लिया और औपी फिर से सिर लगा ली। गली के

सामने जहां पहले ऊंची-ऊंची शहतीरियां रखी रहती थीं, वहां अब एक तिमंजिला मकान खड़ा था। सामाने बिजली के तार पर दो मोटी-मोटी चीलें बिल्कुल जड़ होकर बैठी थीं। बिजली के खंभे के पास थोड़ी धूप थी। वह कई पल धूप में उड़ते हुए जर्जर को देखता रहा। फिर उसके मुंह से निकला-- या मालिक!

एक नवयुवक चाबियों का गुच्छा घुमाता हुआ गली की ओर आया और बुढ़े को वहां खड़े देखकर उसने रुककर पूछा-- कहिए मियां जी, यहां किस तरह खड़े हैं?

बुढ़े मुसलमान की छाती और बांहों में हल्की-सी कंपकंपी हुई और उसने हाँठों पर जबान फेरकर नवयुवक को ध्यान से देखते हुए पूछा-- बेटे, तेरा नाम मनोरी तो नहीं है?

नवयुवक ने चाबियों का गुच्छा हिलाना बंद करके मुट्ठी में ले लिया और आश्चर्य के साथ पूछा-- आपको मेरा नाम कैसे पता है?

-- साढ़े सात साल पहले तू बेटे, इतना-सा था। --यह कहकर बुढ़े ने मुस्कराने की कोशिश की।

-- आप आज पाकिस्तान से आए हैं? -मनोरी ने पूछा।

-- हां, मगर पहले हम इसी गली में रहते थे, -बुढ़े ने कहा-- मेरा लड़का चिरागदीन तुम लोगों का दर्जी था। तकसीम से छह महीने पहले हम लोगों ने यहां अपना नया मकान बनाया था।

-- ओ, गनी मियां। -मनोरी ने पहचान कर कहा।

-- हां बेटे, मैं तुम लोगों का गनी मियां हूँ। चिराग और उसके बीवी-बच्चे तो नहीं मिल सकते, मगर मैंने कहा कि एक बार मकान की सूरत ही देख लूं। और उसने टोपी उतार कर सिर पर हाथ फेरते हुए आंसुओं को बहने से रोक लिया।

-- आप तो शायद काफी पहले ही यहां से चले गये थे? -मनोरी ने स्वर में संवेदना लाकर कहा।

-- हां, बेटे, मेरी बदबख्ती थी कि पहले अकेला निकलकर चला गया। यहां रहता, तो उनके साथ मैं भी...। और कहते-कहते उसे अहसास हो आया कि उसे ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए। उसने बात मुंह में रोक ली, मगर आंख में आए हुए आंसुओं को बह जाने दिया।

-- छोड़िए, गनी साहब, अब बीती बातों को सोचने में क्या रखा है? -मनोरी ने गनी की बांह पकड़ कर कहा-- आइए, आपको आपका घर दिखा दूं?

गली में खबर इस रूप में फैली थी कि गली के बाहर एक मुसलमान खड़ा है, जो रामदासी के लड़के को उठाने जा रहा था उसकी बहन उसे पकड़ कर घसीट लायी, नहीं तो वह मुसलमान उसे ले गया होता। यह खबर पाते ही जो स्त्रियां गली में पीढ़े बिछाकर बैठी थीं, वे अपने-अपने पीढ़े उठा कर घरों के अन्दर चली गयीं। गली में खेलते हुए बच्चों को भी उन स्त्रियों ने पुकार-पुकारकर घरों में बुला लिया। मनोरी जब गनी को लेकर गली में आया, तो गली में एक फेरीवाला रह गया था या कुएँ के साथ उगे हुए पीपल के नीचे रक्खा पहलवान बिखरकर सोया दिखायी दे रहा था। घरों की खिड़कियों में से और किवाड़ों के पीछे से अलबत्ता कई चेहरे झाँक रहे थे। गनी को गली में आते देखकर उनमें हल्की-हल्की चेमेगोइयां शुरू हो गयीं। दाढ़ी के सब बाली सफेद हो जाने के बावजूद लोगों ने चिरागदीन के बाप अब्दुल गनी को पहचान लिया था।

-- वह आपका मकान था। -मनोरी ने दूर से एक मलबे की ओर संकेत किया। गनी पल-भर के लिए ठिठकर फटी-फटी आंखों से उसकी ओर देखता रह गया। चिराग और उसके बीवी -बच्चों की मौत को वह काफी अर्सा पहले स्वीकार कर चुका था, मगर अपने नये मकान को इस रूप में देखकर उसे जो झुरझुरी हुई, उसके लिए वह तैयार

नहीं था। उसकी जबान पहले से ज्यादा खुश्क हो गयी और घुटने भी और ज्यादा काँपने लगे।

-- वह मलबा? -उसने अविश्वास के स्वर में पूछा।

मनोरी ने उसके चेहरे का बदला हुआ रंग देखा। उसने उसकी बांह को और सहारा देकर ठहरे हुए स्वर में उत्तर दिया-- आपका मकान उन्हीं दिनों जल गया था।

गनी छड़ी का सहारा लेता हुआ किसी तरह मलबे के पास पहुँच गया। मलबे में अब मिट्टी ही मिट्टी थी, जिसमें जहाँ-तहाँ टूटी और जली हुई ईंटें फँसी थीं। लोहे और लकड़ी का सामान उसमें से न जाने कब का निकाल लिया गया था। केवल जले हुए दरवाजे की चौखट न जाने कैसे बची रह गई थी, जो मलबे में से बाहर को निकली हुई थी। पीछे की ओर दो जली हुई अलमारियाँ और बाकी थीं, जिनकी कालिख पर अब सफेदी की हल्की-हल्की तह उभर आयी थी। मलबे को पास से देखकर गनी ने कहा-- यह रह गया है यह?

और जैसे उसके घुटने जवाब दे गये और वह जली हुई चौखट को पकड़ कर बैठ गया। क्षण-भर बाद उसका सिर भी चौखट से जा लगा और उसके मुँह से बिलखने की-सी आवाज़ निकली-- हाए! ओए, चिरागदीना!

जले हुए किवाड़ की चौखट साढ़े सात साल मलबे में से सिर निकाले खड़ी तो रही थी, मगर उसकी लकड़ी बुरी तरह भुरभुरा गयी थी। गनी के सिर के छूने से उसके कई रेशे झड़कर बिखर गये। कुछ रेशे गनी की टोपी और बालों पर आ गिरे। लकड़ी के रेशों के साथ एक कैंचुआ भी नीचे गिरा, जो गनी के पैर से छह-आठ इंच दूर नाली के साथ बनी ईंटों की पटरी पर सरसराने लगा। वह अपने लिए सूराख ढूँढता हुआ जरा-सा सिर उठाता, मगर दो- एक बार सिर पटककर और निराश होकर दूसरी ओर को मुड़ जाता।

खिड़कियों में से झाँकने वाले चेहरों की संख्या पहले से कहीं बढ़ गयी थी। उनमें चेमेगोइयां चल रही थीं कि आज कुछ न कुछ जरूर होगा चिरागदीन का बाप गनी आ गया है, इसलिए साढ़े सात साल पहले की सारी घटना आज खुल जायगी। लोगों को लग रहा था जैसे वह मलबा ही गनी की सारी कहानी सुना देगा कि शाम के वक्त चिराग ऊपर के कमरे में खाना खा रहा था जब रक्खे पहलवान ने उसे नीचे बुलाया कि वह एक मिनट आकर एक जरूरी बात सुन जाय। पहलवान उन दिनों गली का बादशाह था। हिंदुओं पर ही उसका काफी दबदबा था, चिराग तो खैर मुसलमान था। चिराग हाथ पर कौर बीच में ही छोड़कर नीचे उतर आया। उसकी बीवी जुबैदा और दोनों लड़कियाँ किश्वर और सुलताना खिड़कियों में से नीचे झाँकने लगीं। चिराग ने डयोढ़ी से बाहर कदम रखा ही था कि पहलवान ने उसे कमीज के कालर से पकड़कर खींच लिया और उसे गली में गिराकर उसकी छाती पर चढ़ बैठा। चिराग उसका छुरेवाला हाथ पकड़कर चिल्लाया-- न, रक्खे पहलवान मुझे मत मार! हाय मुझे बचाओं! जुबैदा! मुझे बचा...! और ऊपर से जुबैदा चीखती हुई नीचे डयोढ़ी की तरफ भागी। रक्खे के एक शगिर्द ने चिराग की जट्टोजहद करती हुई बाहें पकड़ लीं और रक्खा उसकी जांघों को घुटने से दबाये हुए बोला-- चीखता क्यों है, भैण के... तुझे पाकिस्तान दे रहा हूँ, ले!

और जुबैदा के नीचे पहुँचने से पहले ही उसने चिराग को पाकिस्तान दे दिया।

आसपास के घरों की खिड़कियाँ बंद हो गयीं। जो लोग इस दृश्य के साक्षी थे, उन्होंने दरवाजे बंद करके अपने को इस घटना के उत्तरदायित्व से मुक्त कर लिया था। बंद किवाड़ों में भी उन्हें देर तक जुबैदा, किश्वर और सुलताना के चीखने की आवाज़ें सुनायी देती रहीं। रक्खे पहलवान और उसके साथियों ने उन्हें भी उसी रात पाकिस्तान देकर विदा कर दिया, मगर दूसरे तबील रास्ते से। उनकी लाशें चिराग के घर में न मिलकर बाद में नहर के पानी में पायी

गयीं।

दो दिन तक चिराग के घर की खानातलाशी होती रही। जब उसका सारा सामान लूटा जा चुका तो न जाने किसने उस घर को आग लगा दी। रक्खे पहलवान ने कसम खाई थी कि वह आग लगाने वाले को ज़िन्दा ज़मीन में गाड़ देगा, क्योंकि उसने उस मकान पर नज़र रख कर ही चिराग को मारने का निश्चय किया था। उसने उस मकान को शुद्ध करने के लिए हवन-सामग्री भी खरीद रखी थी। मगर आग लगाने वाले का पता ही नहीं चल सका, उसे ज़िन्दा गाड़ने की नौबत तो बाद में आती। अब साढ़े सात साल से रक्खा पहलवान उस मलबे को अपनी जागीर समझता आ रहा था, जहाँ न वह किसी को गाय-भैंस बांधेन देता था ओर न खोंचा लगाने देता था। उस मलबे से बिना उसकी अनुमति के कोई ईंट भी नहीं उठा सकता था।

लोग आशा कर रहे थे कि सारी कहानी ज़रूर किसी न किसी तरह गनी के कानों तक पहुंच जायगी जैसे मलबे को देखकर उसे अपने-आप ही सारी घटना का पता चल जायगा। और गनी मलबे की मिट्टी नाखूनों से खोद-खोद कर अपने ऊपर डाल रहा था और दरवाजे के चौखट को बाँह में लिये हुए रो रहा था-- बोल, चिरागदीना, बोल! तू कहाँ चला गया, ओए! ओ किश्वर! ओ सुल्तान! हाय मेरे बच्चे! ओएऽऽ! गनी को कहाँ छोड़ दिया, ओएऽऽ!

और भुरभुरे किवाड़ से कड़ी के रेशे झड़ते जा रहे थे।

पीपल के नीचे सोए हुए रक्खे पहलवान को किसी ने जगा दिया, या वह वैसे ही जाग गया। यह जानकर कि पाकिस्तान से अब्दुल गनी आया है ओर अपने मकान के मलबे पर बैठा है, उसके गले में थोड़ा झाग उठ आया, जिससे उसे ख़ाँसी हो आयी और उसने कुँए के फ़र्श पर थूक दिया। मलबे की ओर देखकर उसकी छाती से धौंकनी का-सा स्वर निकला और उसका निचला ओंठ थोड़ा बाहर को फैल आया।

-- गनी अपने मलबे पर बैठा है।

उसके शागिर्द लच्छे पहलवाने ने उसके पास आकर बैठते हुए कहा।

-- मलबा उसका कैसे है? मलबा हमारा है!

पहलवान ने झाग के कारण घरघराई हुई आवाज़ में कहा।

--मगर वह वहाँ पर बैठा है ।

लच्छे ने आंखों में रहस्यमय संकेत लाकर कहा।

-- बैठा है, बैठा रहे, तू चिलम ला।

उसकी टांगें थोड़ी फैल गयीं और उसने अपनी नंगी जांघों पर हाथ फेरा।

-- मनोरी ने अगर उसे कुछ बताया-उताया तो...।

लच्छे ने चिलम भरने के लिए उठते हुए उसी रहस्यपूर्ण दृष्टि से देखकर कहा।

--मनोरी की शामत आयी है!

लच्छे चला गया।

कुँए पर पीपल की कई पुरानी पत्तियां बिखरी थीं। रक्खा उन पत्तियों को उठा-उठाकर हाथों में मसलता रहा। जब लच्छे ने चिलम के नीचे कपड़ा लगाकर उसके हाथ में दिया तो उसने कश खींचते हुए पूछा-- और भी तो किसी से

गनी की बात नहीं हुई?

-- नहीं।

-- ले।

और उसने खांसते हुए चिलम लच्छे के हाथ में दे दी। लच्छे ने देखा कि मनोरी मलबे की तरफ से गनी की बांह पकड़े हुए आ रहा है। वह उकड़ू होकर चिलम के लम्बे-लम्बे कश खींचने लगा। उसकी आंखें आधा क्षण रक्खे के चेहरे पर टिकतीं और आधा क्षण गनी की ओर लगी रहतीं।

मनोरी गनी की बांह पकड़े हुए उससे एक कदम आगे चल रहा था, जैसे उसकी कोशिश हो कि गनी कुएं के पास से बिना रक्खें पहलवान को देखे ही निकल जाय। मगर रक्खा जिस तरह बिखरकर बैठा था, उससे गनी ने उसे दूर से ही देख लिया। कुएँ के पास पहुँचते न पहुँचते उसकी दोनों बांहें फैल गयीं और उसने कहा-- रक्खे पहलवान!

रक्खे ने गर्दन उठाकर और आंखें जरा छोटी करके उसे देखा। उसके गले में अस्पष्ट-सी घबराह हुई, पर वह बोला कुछ नहीं।

-- रक्खे पहलवान, मुझे पहचाना नहीं?

गनी ने बांहें नीची करके कहा-- मैं गनी हूँ, अब्दुल गनी, चिरागदीन का बाप!

पहलवान ने सन्देहपूर्ण दृष्टि से उसका ऊपर से नीचे तक जायजा लिया। अब्दुल गनी की आंखों में उसे देखकर चमक आ गयी थी। सफेद दाढ़ी के नीचे उसके चेहरे की झुरियाँ ज़रा फैल गयी थीं। रक्खे का निचला होंठ फड़का, फिर उसकी छाती से भारी-सा स्वर निकला-- सुना गनिया!

गनी की बांहें फिर फैलने को हुई, परन्तु पहलवान पर कोई प्रतिक्रिया न देखकर उसी तरह रह गयी। वह पीपल के तने का सहारा लेकर कुएँ की सिल पर बैठ गया.....

ऊपर खिड़कियों में चेमेगोइयां तेज हो गयीं कि अब दोनों आमने-सामने आ गए हैं, तो बात ज़रूर खुलेगी फिर हो सकता है, दोनों में गाली-गलौज भी हो। अब रक्खा गनी को कुछ नहीं कह सकता, अब वो दिन नहीं रहे बड़ा मलबे का मालिक बनता था! असल में मलबा न इसका है, न गनी का। मलबा तो सरकार की मिल्कियत है। किसी को गाय का खूँटा नहीं लगाने देता। मनोरी भी डरपोक है। उसने गनी को बताया क्यों नहीं कि रक्खे ने ही चिराग और उसके बीवी-बच्चों को मारा है? रक्खा आदमी नहीं है, सांड है। दिन भर सांड की तरह गली में घूमता है। गनी बेचारा कितना दुबला हो गया है। दाढ़ी के सारे बाल सफेद हो गये हैं!

गनी ने कुएं की सिल पर बैठकर कहा-- देख, रक्खे पहलवान, क्या से क्या रह गया है? भरा-पूरा घर छोड़कर गया था और आज यहां मिट्टी देखने आया हूँ। बसे हुए घर की यही निशानी रह गयी है। तू सच पूछे, रक्खे, तो मेरा यह मिट्टी भी छोड़कर जाने को जी नहीं करता।

और उसकी आंखें छलछला आई।

पहलवान ने फैली हुई टांगें समेट लीं और अंगोछा कुएं की मुंडेर से से उठाकर कंधे पर डाल लिया। लच्छे ने चिलम उसकी तरफ बढ़ा दी और वह कश खींचने लगा।

-- तू बता, रक्खे, यह सब हुआ किस तरह?

गनी आंसू रोकता हुआ आग्रह के साथ बोला-- तुम लोग उसके पास थे, सबमें भाई-भाई की-सी मुहब्बत थी,

अगर वह चाहता तो वह तुममें से किसी के घर में नहीं छिप सकता था? उसे इतनी भी समझ नहीं आई!

-- ऐसा ही है ।

रक्खे को स्वयं लगा कि उसकी आवाज़ में कुछ अस्वाभाविक-सी गूँज है। उसके होंठ गाढ़े लार से चिपक-से गये थे। उसकी मूँछों के नीचे से पसीना उसके होंठों पर आ रहा था। उसके माथे पर किसी चीज का दबाव पड़ रहा था और उसकी रीढ़ की हड्डी सहारा चाह रही थी।

-- पाकिस्तान का क्या हाल हैं?

उसने वैसे ही स्वर में पूछा। उसके गले की नसों में तनाव आ गया था। उसने अंगोछे से बगलों का पसीना पोंछा और गले का झाग मुँह में खींच कर गली में थूक दिया।

-- मैं क्या हाल बताऊँ, रक्खे!

गनी दोनों हाथों से छड़ी पर जोर देकर झुकता हुआ बोला-- मेरा हाल पूछो, तो वह खुदा ही जानता है। मेरा चिराग साथ होता तो और बात थी। रक्खे! मैंने उसे समझाया था कि मरे साथ चला चल। मगर वह अड़ा रहा कि नया मकान छोड़कर कैसे जाऊँ । यहाँ अपनी गली है, कोई खतरा नहीं है। भोले कबूतर ने यह नहीं सोचा कि गली में खतरा न सही, बाहर से तो खतरा आ सकता है। मकान की रखवाली के लिए चारों जनों ने जान दे दी। रक्खे! उसे तेरा बहुत भरोसा था। कहता था कि रक्खे के रहते कोई मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। मगर जब आनी आई, तो रक्खे के रोके न रुक सकी।

रक्खे ने सीधा होने की चेष्टा की, क्योंकि उसकी रीढ़ की हड्डी दर्द कर रही थी। उसे अपनी कमर और जांघों के जोड़ पर सख्त दबाव महसूस हो रहा था। पेट की अंतड़ियों के पास जैसे कोई चीज़ उसकी साँस को जकड़ रही थी। उसका सारा जिस्म पसीने से भीग गया था और उसके पैरों के तलुवों में चुनचुनाहट हो रही थी। बीच-बीच में फलझड़ियाँ-सी ऊपर से उतरतीं और उसकी आँखों के सामने से तैरती हुई निकल जातीं। उसे अपनी जबान और होंठों के बीच का अन्तर कुछ ज्यादा महसूस हो रहा था। उसने अंगोछे से होंठों के कोनों को साफ किया और उसके मुँह से निकला-

--हे प्रभु! सच्चीआ, तू ही है, तू ही है, तू ही है!

गनी ने लक्षित किया कि पहलवान के होंठ सूख रहे हैं और उसकी आंखों के इर्द-गिर्द दायरे गहरे हो आये हैं, तो वह उसके कंधे पर हाथ रखकर बोला-- जी हल्कान न कर, रक्खिया। जो होनी थी, सो हो गयी। उसे कोई लौटा थोड़े ही सकता है। खुदा नेक की नेकी रखे और बद की बदी माफ करें। मेरे लिए चिराग नहीं, तो तुम लोग तो हो। मुझे आकर इतनी ही तसल्ली हुई कि उस ज़माने की कोई तो यादगार है। मैंने तुमको देख लिया, तो चिराग को देख लिया। अल्लाह तुम लोगों को सेहतमंद रखे। जीते रहो और खुशियां देखो!

और गनी छड़ी पर दबाव देकर उठ खड़ा हुआ। चलते हुए उसने फिर कहा-- अच्छा रक्खे पहलवान, याद रखना!

रक्खे के गले से स्वीकृति की मद्धम-सी आवाज़ निकली। अंगोछा बीच में लिये हुए उसके दोनों हाथ जुड़ गये। गनी गली के वातावरण को हसरत भरी नजर से देखता हुआ धीरे-धीरे गली से बाहर चला गया।

ऊपर खिड़कियों में थोड़ी देर चेमेगोइयां चलती रहीं कि मनोरी ने गली से बाहर निकलकर जरूर गनी को सब कुछ बता दिया होगा। गनी के सामने रक्खे का तालू किस तरह खुश्क हो गया था! रक्खा अब किस मुँह से लोगों को मलबे पर गाय बांधने से रोकेगा? बेचारी जुबैदा! बेचारी कितनी अच्छी थी! कभी किसी से मंदा बोल नहीं बोली। रक्खे

मरदूद का घर, न घाट । इसे किस माँ-बहन का लिहाज था?

और थोड़ी ही देर में स्त्रियाँ घरों से गली में उतर आयीं, बच्चे गली में गुल्लि-उण्डा खेलने लगे और दो बारह-तेरह बरस की लड़कियाँ किसी बात पर एक-दूसरी से गुत्थम-गुत्था हो गयीं।

रक्खा गहरी शाम तक कुएं पर बैठा खंखरता और चिलम फूँकता रहा। कई लोगों ने वहाँ से गुजरते हुए उससे पूछा-

-- रक्खे शाह, सुना है आज गनी पाकिस्तान से आया था?

-- आया था । रक्खे ने हर बार एक ही उत्तर दिया।

-- फिर?

-- फिर कुछ नहीं, चला गया।

रात होने पर पहलवान रोज़ की तरह गली के बाहर बाईं ओर की दुकान के तख्ते पर आ बैठा। रोज़ अक्सर वह रास्ते से गुजरने वाले परिचित लोगों को आवाज़ दे-देकर बुला लेता था और उन्हें सट्टे के गुर और सेहत के नुस्खे बताया करता था। मगर उस दिन वह लच्छे को अपनी वैष्णों देवी की यात्रा का विवरण सुनाता रहा, जो उसने पन्द्रह साल पहले की थी। लच्छे को विदा करके वह गली में आया, तो मलबे के पास लोकू पंडित की भैंस को खड़ी देखकर वह रोज़ की आदत के मुताबित उसे धक्के दे-दे कर हटाने लगा-- तत्-तत्...तत्- तत्...

और भैंस को हटाकर वह सुस्ताने के लिए मलबे के चौखट पर बैठ गया। गली उस समय बिकूल सुनसान थी। कमेटी की कोई बत्ती न होने से वहाँ शाम से ही अंधेरा हो जाता था। मलबे के नीचे नाली का पानी हल्की आवाज़ करता हुआ बह रहा था। रात की खामोशी के साथ मिली हुई कई तरह की हल्की-हल्की आवाज़ें मलबे की मिट्टी में से निकल रही थीं ऋ ऋ च्यु च्यु च्यु चिक्-चिक्-चिक् चिर् इर् -रीरीरीरी- चिर् एक भटका हुआ कौआ न जाने कहाँ से उड़कर कड़ी की चौखट पर आ बैठा। उससे लकड़ी के रेशे इधर-उधर छितरा गये। कौए के वहाँ बैठते ने बैठते मलबे के एक कोने में लेटा हुआ कुत्ता गुराकर उठा और ज़ोर-ज़ोर से भौंकने लगा-- वउ-अउ अऊ-वऊ। कौवा कुछ देर सहमा-सा चौखट पर बैठा रहा, फिर वह पंख फड़फड़ाता हुआ उड़कर कुएँ के पीपल पर चला गया। कौए के उड़ जाने पर कुत्ता और नीचे उतर आया और पहलवान की ओर मुँह करके भौंकने लगा। पहलवान उसे हटाने के लिए भारी आवाज़ में बोला-- दुर दुर दुर दुरे।

मगर कुत्ता और पास आकर भौंकने लगा-- वउ-अउ-वउ-वउ-वउ।

-- हट हट, दुर्र-दुर्र दुरे

- वऊ-अऊ- अऊ-अउ-अउ।

पहलवान ने एक ढेला उठाकर कुत्ते की ओर फेंका। कुत्ता थोड़ा पीछे हट गया, पर उसका भौंकना बंद नहीं हुआ। पहलवान मुँह ही मुँह में कुत्ते की माँ को गाली देकर वहाँ से उठ खड़ा हुआ और धीरे-धीरे जाकर कुएँ की सिल पर लेट गया। पहलवान के वहाँ से हटने पर कुत्ता गली में उतर आया और कुएँ की ओर मुँह करके भौंकने लगा। काफ़ी देर भौंक कर जब गली में उसे कोई प्राणी चलता-फिरता दिखायी नहीं दिया तो वह एक बार कान झटककर मलबे पर लौट आया और वहाँ कोने में बैठकर गुराने लगा।